कलापिनी

लेखक—

पण्डित केदारनाथ मिश्र "प्रभात" एम्० ए०

प्रकाशक,

नवलकिशोर प्रेस

हज़रतगंज, लखनऊ.

प्रथम संस्करण]   १९३९ ई०   [मूल्य ॥।)

कामना

भारतवर्ष में चारों ओर भीषण राजनीतिक उथल-पुथल। समुद्र पार अनवरत बम-वर्षा। संघर्षणमय वर्तमान और अनिश्चित भविष्य। ऐसे कोलाहलपूर्ण काल में "कलापिनी" का कलित-दर्शन लोगों को शायद अप्रिय जँचे। इसलिये यह कह देना आवश्यक प्रतीत होता है कि "कलापिनी" की प्राय: समस्त कविताएँ १९३७-३८ में लिखी गई थीं और पुस्तक उस समय प्रेस में गई जब युद्ध के आसार कहीं भी नज़र नहीं आते थे।

फ्रांस का विश्व-विख्यात विप्लव जब प्रारंभ हुआ तो तत्कालीन अँगरेज़ी कवियों की कविताएँ क्रुद्धा सर्पिणी की भाँति फुफकार उठीं। सभी कवियों ने कविता की श्वास से फूँककर क्रांति की ज्वाला को अधिकाधिक प्रज्वलित करने की ठान ली। परंतु शीघ्र ही उनके कवि-हृदय की मधुर कोमलता प्रकृति के चिर-शीतल सौंदर्य की रंगीन-छाया में लेटकर इन्द्रधनुषी कल्पना-किरणों से क्रांति के बिखरे केशों में न जाने किस स्वर्ण-लोक के पारिजात गूँथने लगी। विप्लवी की आत्मा को आनन्द मिला—वह आनन्द जिसने वर्ड्सवर्थ की कविता को प्राण दिया

और शेली के गीतों को आलोक । रहस्यमय और स्निग्ध-मधुर ।

पंडित जवाहरलाल नेहरू को मैं सबसे पहले कवि मानता हूँ । उनका हृदय उतना ही करुण-सुन्दर है जितनी भारत-कोकिला श्रीमती नायडू की कविताएँ । हृदय में कविता की न मिटनेवाली आग लिये हुए ये दोनों नयनाभिरामरत्न कितनी शान से आज भारत के भाग्याकाश में चमक रहे हैं ।

आज़ादी की रागभीनी वारुणी से विभोर दीवानों की टोली जब जेलों में चारणों के गीत पढ़कर ऊब उठे तो संभव है, एक दिन दिवस के कोलाहल का अन्त होने पर उनके बन्दी-जीवन के सूनेपन के साथ मेरी "कलापिनी" का परिचय हो जाय !

बाँकीपुर
१२. १२. ३६

श्रीकेदारनाथ मिश्र "प्रभात"
एम्० ए० साहित्याचार्य

---

*

उसी को

जिसकी प्रेरणा से

ये कविताएँ लिखी गई हैं ।

प्रभात

विषय-सूची

कलापिनी

शत-शत स्वप्नों के चंचल-घन

शत-शत स्वप्नों के चंचल-घन
आते बन-बनकर सम्मोहन
अलि ! मेरी पलकों के भीतर कबसे बसता मधुवन ?
सन्ध्या की ज्वाला में घुलमिल
आँसू के तारों-सा अनमिल
कब अनजाने गूँज उठा अलि ! जीवन का सूनापन ?
आज हिलोरों का चल-अंचल
साँसों से छू-छूकर प्रतिपल
प्रिय के कारण, या अपने ही उर हो उठता उन्मन ?
फूलों के मन्दिर में अविकल
विरही के दीपक-सी जल-जल
पीड़ाएँ क्यों बिखर रहीं वन-वन सौरभ का स्पन्दन ?
अलि ! कलापिनी उतरी जग में
मैं बैठा एकाकी मग में
प्रिय की सुध में, या यों ही भरता गीतों की गुंजन ?

———

साँझ का शतदल

जगमगाता पहन मेरा अश्रु-मुक्ताहल

साँझ का शतदल !
जगमगाता पहन मेरा अश्रु-मुक्ताहल !
साँझ का शतदल !
शेष-किरणों की सुनहली-ज्योति में खिलकर,
विजन के उच्छ्वास से कुछ सिहर कर हिलकर,
पी रहा मेरी व्यथाओं की सुरभि मदकल,
साँझ का शतदल ।
स्वप्न के मृदुदीप-सा लघु-लघु प्रकम्पित-तन,
आलि ! बिखरे प्रणय-सा कोमल करुण उन्मन,
आज मेरे गीत रँगता बन कनक-कुड्मल,
साँझ का शतदल ।
स्मरण में लिपटे हुए एकान्त की सजनी—
चुप खड़ी आ क्षितिज पर मदिरा पिये रजनी ।
खोलता मेरा दिवस-सा दग्ध अन्तस्तल,
साँझ का शतदल ।

परिचय

वह चिर-परिचित-पथ यही प्राण !

उस दिन कण-कण में जागी थी
मेरे प्रिय की मृदु रूप-ज्वाल ;
चरणों के चुम्बन को सहास
उतरी थी नभ से किरण-बाल ।
इन्द्रायुध-सा था बिखर गया
मेरे प्रिय का शुचि-मधुर हास ;
अलि ! उमड़ पड़ी थी सरिता बन
मधु-रस की चारों ओर प्यास ।

जीवन से फूटा जहाँ गान
वह चिर-परिचित-पथ यही प्राण !

वीणा-स्वर-सा था उठा गूँज
मेरे प्रिय के नुपुरों का रव ;
सब स्वप्न-लीन थे मूक मुग्ध
नक्षत्र, कुसुम तृण-तरु-पल्लव ।

लहरें उमड़ीं डोली समीर
मेरे प्रिय की सुनकर पुकार,
मेरे आँसू बन गये फूल
मैं फूलों का सौरभ उदार।

खो गया हृदय जिस थल अजान
वह चिर-परिचित-पथ यही प्राण!

निशीथ

आज मेरी वीन मौन उदास !

आज मेरी वीन मौन उदास !

टाँग दो तरु-डाल पर, निस्पन्द लघु-लघु तार
चुप खड़ी कविता लिये आँसू-भरी मनुहार
पल्लवों के बीच भर अस्फुट अशब्द पुकार
घूमता भूले-पथिक-सा श्रान्त पवन उदार।

बन रहा उच्छ्वास अविरल चाँदनी का हास।

सिन्धु-लहरों में सुलाकर स्वप्न के उन्माद
बाँध श्यामल मेघ-अलकों में अनन्त विषाद
जा रहा विधु किधर? किंचित् भी न मेरी याद
प्रिय व्यथा अभिशाप है या अमर आशीर्वाद ?

आँकते नक्षत्र जीवन का करुण इतिहास।

आज मेरी वीन मौन उदास !

कुंज-वन में फैल कुमुदों की मदिर-मुस्कान
चूमती लिपटे व्यथा में मृत्तिका के प्राण
सो रहे हिम-रश्मियों में तारिका के गान
स्तब्ध सारा विश्व, सारी प्रकृति स्तब्ध महान।

वेदना के चित्र-सा अंकित अखिल आकाश।

कौन-सा प्रिय-गीत गाऊँ—कौन-सा प्रिय-राग !
बन गया जब स्वयं जीवन ही अनन्त विहाग
प्राण ! उर के स्पन्दनों में भर प्रलय-अनुराग
पूजता एकान्त में मैं यह सुनहली आग।

थक गये आह्वान कर सावन शिशिर मधुमास !
आज मेरी वीन मौन उदास !

स्वप्न-मिलन

नींद में रँग स्वप्न के घन !

नींद में रँग स्वप्न के घन
डाल अवगुंठन, मिलन को
सजनि ! प्रिय आता चिरन्तन !

जान पग-ध्वनि मन्द सुमधुर
जाग पड़ता मैं तृषातुर
बाँध पाता मैं न तोभी
सजनि ! सुख के वे चपल क्षण !

पी मिलन-माध्वीक सुन्दर
नींद मेरी अचिर नश्वर,
रूप में प्रिय के पिघल-जल
सजनि ! बनती क्यों न अमरण ?

कम्पन

जगमगाता आँसुओं की रात में मधुमास मेरा !

सजल-गीतों में सुनहले
आज मेरे स्वप्न सुन्दर—
हो रहे साकार प्रतिपल
कुमुद-अधरों पर बिखर कर।
पुलक भर-भर ढुलक जाता क्षितिज में मृदुहास मेरा—
स्वर्ण-सा मृदुहास मेरा।

रश्मि-कण तरु-पल्लवों के
बन रहे रंगीन बादल,
और सौरभ की सजीली
श्वास स्मरण-समीर पागल।
रूप की प्रिय माधुरी से अलि! मधुर आकाश मेरा—
प्रेम का आकाश मेरा।

अश्रु के मृदु फूल खिलते
साधना के सजग-जग में,
प्राण बनकर दीप जलते
आगमन के मृदुल-मग में।
चल-तरंगों में निरन्तर बज रहा उल्लास मेरा—
स्मित-तरल उल्लास मेरा।

सिन्धु-लहराता, हृदय मेरा—
लहर बन सिन्धु जाता,
नाव प्रिय की आ रही है,
आ रहा प्रिय मुस्कुराता।
जगमगाता आँसुओं की रात में मधुमास मेरा—
आलि! मिलन-मधुमास मेरा।

आकर्षण

प्रिय ! मेरे घन अन्धकार में
क्यों तुमने दीपक बाला ?

प्रिय! क्यों मधुर लगी हाला?
बैठ चाँदनी के मधुवन में
उन्मन-से खोये-से मन में
आज माँग बैठे पागल-से
क्यों मेरे उर का प्याला?

सन्ध्या के विहँसित विद्रुम का
नक्षत्रों के विकच-कुसुम का
हार धूल में डाल, पहर ली
क्यों हँसकर मेरी ज्वाला?

आँसू-तारों के परिणय में
मिट-मिटकर बनने की लय में
मैंने गाया, झूम उठे क्यों
प्रिय! तुम होकर मतवाला?

परिचय की बन शून्य-पहेली
सुलग चिताएँ उठीं अकेली
फिर भी सरस प्रतीत हुई क्यों
पीड़ाओं की मधुशाला ?

शुष्क-भार सपनों का लेकर
अपने उच्छ्वासों में सुन्दर,
प्रिय ! मेरे घन अन्धकार में
क्यों तुमने दीपक बाला ?

———

सान्ध्यगीत

मॉँगता जीवन मरण से

आज प्रिय ! वरदान कैसा ?

रूप यह अ-समान कैसा ?
कामना करता तुम्हारी
प्राण ! मैं अनजान कैसा ?

निठुर रे निर्वात नभ-तल,
निठुर दिङ्मंडल अचंचल,
खोज में खग-सा विकल,
मेरा असम्बल गान कैसा ?

उतर आई साँझ जग में
चुप खड़ा हो प्रेम-मग में
माँगता जीवन मरण से
आज प्रिय ! वरदान कैसा ?

निर्माल्य

तुम क्या जानो, मेरी कविता
क्यों रह-रह उठती है कराह !

प्रिय ! क्यों विस्मय करते विलोक
यह मेरे आँसू का प्रवाह !

जब चुपके-से लाकर समीर
कोई लघु भूला हुआ गान—
पल-भर में चूम जगा देता
सोई ज्वालाओं को अजान

तब प्राण ! उमड़ पड़ता मेरा
अव्यक्त - व्यथा - सागर अथाह !

तुम पूछ रहे, क्यों बार-बार
मैं हँसती-कलियों को बिसार—
इन शुष्क-लताओं में सभार
भरता हूँ अपना सजल प्यार ?

कैसे कह दूँ मैं बिछा रहा
भस्मावशेष पर स्मरण-दाह !

सुन आज तुम्हारे चरणों का
नूपुर-विराव प्रेमोद्भ्रांत,
फिर इधर देखकर किरणों का
यह जलता-सा गोधूलि-प्रांत——

तुम क्या जानो, मेरी कविता
क्यों रह-रह उठती है कराह !

——

कलध्वनि

गीतवाली ! गीत का कैसे पिरोऊँ हार ?

एक ही संसार !—
मेरा एक ही संसार ।

गीत गा तुम गीतमय करती निकुंज-निवास
गीत बनकर उमड़ छू लेती अनन्ताकाश
गीत, गीत, अगीत क्या—जीवन तुम्हारा गीत
गीत भावी-वर्तमान कुमारि ! गीत अतीत ।

गीत के इस पार तुम हो गीत के उस पार ।
मेरा एक ही संसार !

स्वप्न के आलि ! गीत कैसे, स्वप्न मूक महान ।
कल्पना से गूँथ पाया स्मरण ने कब गान ?
आँसुओं से बह सका क्या मुक्त-गीत-प्रवाह ?
गीत बन पाई कभी क्या आलि ! अन्तर्दाह ?

गीतवाली ! गीत का कैसे पिरोऊँ हार ?
मेरा एक ही संसार ।

गीत में बहते तुम्हारे गीत-से मृदु प्राण
स्पर्श से स्वर के पिघल पड़ते निठुर पाषाण
गीत से स्पन्दित किये तुमने कुसुम के देश
गीत में अंकित किये कवि के उमंग अशेष।

गीत की तुम स्वामिनी, मैं गीत-बन्दी प्यार !
मेरा एक ही संसार।

एक ही संसार मेरा शून्य-शान्त-अशान्त
एक ही संसार तिमिराच्छन्न भाराक्रान्त
सो रहा मधुमास पतझर बन जहाँ सुनसान
एक ही संसार मेरा वह अनन्त अजान।

रिक्त मेरे मरण-जीवन के प्रकम्पित-तार !
मेरा एक ही संसार !

एक ही संसार !

अनुत्तरित

यह मरण-दीप जल-जलकर

किसकी कर रहा प्रतीक्षा ?

सागर की चंचल-लहरें
नीले-नभ के चुम्बन को—
क्यों गरज-गरज कर उठतीं
फिर पिघल-पिघल मिट जातीं ?

मधु-ऋतु के चल जाने पर
अवशेष प्यार कलियों का—
क्यों सौरभ की साँसों में
चुप रोता-सा रह जाता ?

आँसू के निर्मल-जल पर
सुध की सूनी तसवीरें—
क्यों लिखतीं नीरव आँखें
फिर उमड़-उमड़ अकुलातीं ?

सुरधनु - से सुन्दर - सुन्दर
खग-से चंचल सपनों को—
क्यों बाँध न पाता यौवन
मृदु डोरी में अलकों की ?

उच्छ्वास - भरे जीवन के
नीरव निस्पन्द तिमिर में—
यह मरण-दीप जल-जलकर
किसकी कर रहा प्रतीक्षा ?

—

स्मृति-पर्व

आँसुओं में खिल अपरिचित !

क्या न मेरा प्यार लोगे ?

स्वप्न-सा मृदु-मृदु उतर प्रिय
अलस-कुसुमों के अधर पर—
अरुण - आशा के रँगीले
कल-कनक-कण-से बिखरकर—

आज रँगता चित्र पथ में बैठ यह नीहार का दिन !

बाँध उर में कामनाएँ
करुणतम तसवीरवाली—
रूप की ज्वाला पिये
अमरण मधुरतम पीरवाली—

भींग आँसू में थिरकता मौन वह मनुहार का दिन !

अनिल में भर-भर प्रतिक्षण
वेदना के उच्छ्वसित स्वर—
उमड़ फिर सुरचाप - सा
द्रुम के पलक पर तुहिन बनकर—

जल रहा जीवन लिये स्मृति के प्रथम त्योहार का दिन !

आँसुओं में खिल अपरिचित !
क्या न मेरा प्यार लोगे ?
तूलिका लेकर प्रलय की
क्या न बोलो, आँक दोगे—

मिलन-पट पर आज अपने सुकवि के शृंगार का दिन ?

विश्व-विस्मृति

बैठ जीवन के तिमिर में

चित्र कोई आँकती है !

विश्व की विस्मृति बुलाती !

सजनि ! मैं उन्मद पिये अभिशाप-अधरों का हलाहल
कल्पनाओं के क्षितिज का बन रहा विक्षिप्त बादल
उमड़कर क्षणमात्र में उच्छ्वास-सा मैं फैल जाता
उतर कुंजों में लता-तरु-पल्लवों में मुस्कुराता

तब न-जाने आग कैसी
हृदय में सन्ध्या जलाती !

स्फुलिंग-से उड़ते गगन में—दूर उस नीले गगन में
टिमटिमाता आँसुओं का एक धुँधला-दीप मन में
विजन के निश्वास से कोई सजल-सन्देश आता
मौन मेरा अनिल में मिल स्वप्न-कण-सा बिखर जाता

तब हृदय में वेदना के
गीत चुन-चुन कौन गाती ?

बैठ जीवन के तिमिर में चित्र कोई आँकती है
तारिकाओं से प्रलय की ओर नीरव झाँकती है
काँपती छाया स्मरण की शून्य-सीमा पर अकेली
बन रही है निमिष पल की स्तब्धता भारी पहेली

गिरि-शिखर पर चढ़ मरण का
कौन नूपुर-सा बजाती ?

विश्व की विस्मृति बुलाती !

प्रलय-पुष्प

आह जीवन !—एक कम्पन !
क्षितिज-उर का एक स्पन्दन !
श्वास में लघु एक लहराता
असीमित प्यार मेरा !!

खिल रहा अमरत्व रूपसि !
शून्य के उस पार मेरा !

प्रणय का पी एक ही कण
मैं बना चिर-प्रज्वलित-क्षण,
आलि ! प्रियतम ने किया यह
प्रलय से शृंगार मेरा !

आह जीवन !—एक कम्पन !
क्षितिज-उर का एक स्पन्दन !
श्वास में लघु एक लहराता
असीमित प्यार मेरा !

खिल रहा अमरत्व रूपसि !
शून्य के उस पार मेरा !

गूँजता मैं गीत बन-बन—
गूँजता प्रतिनिमिष उन्मन,
गूँजता प्रिय के करों से
बज हृदय का तार मेरा !

मरण के हिममय अधर पर
मिलन का मधुमास बनकर—
किरण-सा बिखरा अपरिमित
चिर-सजग संसार मेरा !

खिल रहा अमरत्व रूपसि !
शून्य के उस पार मेरा !

अज्ञात
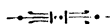
तुम न बन पाये कभी घन....

मौन क्यों हो प्राण ?

साँझ की छाया लपेटे
शून्य में स्मृति के अचंचल,
जब पथिक कोई, हृदय का
सिहर रँगता दग्ध-अंचल

तब न कुछ भी बोलते तुम ;
पालते धूमिल-दृगों में कौन-सा आख्यान ?
प्राण ! मेरे प्राण !

मौन क्यों हो प्राण ?

क्षुद्र होकर भी असीमित
व्योम-सा विस्तार रखते,
बूँद होकर भी अकल्पित
बन्द पारावार रखते।

तुम न बन पाये कभी घन ;
सीखती तो भी तुम्हीं से मेघ-ऋतु निज गान !
प्राण ! मेरे प्राण !

———

प्रतिरोध
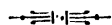
आह ! पूर्व में आग लग गई,—
जलता चित्राधार !!

तारों ने घूँघट डाला
पृथ्वी की ओर निहार,
लिया एक पल में समेट
विधु ने किरणों का प्यार !

आह ! पूर्व में आग लग गई,—
जलता चित्राधार !
रजनी ! रुको, न मिटने दो
सपनों का यह संसार !

उषे ! रँगो मत रक्त-धार से
वन-प्रान्तर तरु-पात,
क्षितिज ! छिपा लो अपने
अंचल में यह अरुण प्रभात !

बने रहो बन्दी फूलों के
मत डोलो मधुवात !
रुको, न पल-भर में भागो
अयि स्वप्न-मिलन की रात !

स्वरभासित

आँक मानस-लहर पर तब वह तुम्हारा हास !—

बन गया जीवन अशेष-सुवास ।

जब विजन में मैं गया ले
स्मरण-दीप अशान्त ;
माँगने मधुयामिनी से
स्मर - मुखर एकान्त,
तब तुम्हारा श्वास-सौरभ पी वसन्त-विभोर—
बन गया जीवन अनन्त-हिलोर !

जब विजन में मैं गया
लेकर व्यथा सुनसान—
माँगने शेफालिका से
स्मर - सुरभि अनजान ।
आँक मानस-लहर पर तब वह तुम्हारा हास—
बन गया जीवन अशेष-सुवास ।

जब विजन में मैं गया ले
कल्पना का देश—
माँगने गिरि-निर्झरों से
स्मर-पुलक अनिमेष।
तब तिमिर में सुन तुम्हारा अनिल-कम्पित गान!
बन गया जीवन प्रतिध्वनि प्रान!

अनुभव
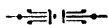
नित जलाकर दीप शत-शत
यामिनी जाती चली।

करुण कोयल स्वर-सुधा से
अश्रु से मेघावली—
सींचती सुध की कली।

ग्रीष्म की ज्वाला सुलगती
हृदय में मधुमास के,
चित्र कोई आँकते दृग
आकुलित आकाश के।

नित जलाकर दीप शत-शत
यामिनी जाती चली—
सींचती सुध की कली।

चाँदनी की श्वास में गिरि-
मल्लिका कुछ गा रही,
प्यास सिकता की जलधि को
बार-बार जगा रही।

डोलती मधु - भार ले
पागल - बयार गली - गली ।
सींचती सुध की कली ।

स्वप्नमय संधान नीरव
शेष - प्यार बिखेरते,
प्राण कण-कण में किसी की
रूप - छाया हेरते ।

रे, मरण को चूम—
जीवन की चिरन्तन बेकली—
सींचती सुध की कली !

—

सन्निध
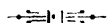
करुण मैं, प्रिय भी करुण

मैं मौन, प्रिय भी मौन !

मैं खड़ा इस पार
प्रिय मेरा खड़ा उस पार,
बीच में सागर तरंगित
अन्त - हीन अपार ।

विकल मेरे लोचनों में
अश्रु की जल - धार,
विकल प्रिय के लोचनों में
मोतियों - सा प्यार ।

इधर कोयल कुहुकती
रोता उधर प्रतिनाद ;
इधर सुध की आग जलती
उधर व्याप्त विषाद ।

बन्दिनी बन हृदय में मेरे
व्यथा चुपचाप,
बन्द प्रिय के हृदय में
विरहाग्नि का सन्ताप।

मैं हिलोरों में बहाता
स्वप्न का जलयान,
प्रिय हिलोरों को सुनाता
स्वप्न का आख्यान।

करुण मैं, प्रिय भी करुण
मैं मौन, प्रिय भी मौन,
सजल मैं क्यों, प्रिय सजल क्यों—
यह बतावे कौन ?

डोलती मधुवात ले
मेरे हृदय का ज्वार,
डोलती प्रिय के प्रणय का
बाँध सौरभ-भार ।

सिन्धु से मैं बूँद का
कहता करुण इतिहास,
सिन्धु में प्रिय बूँद की
भरता अनोखी प्यास ।

हृदय मेरा चित्र, प्रिय का
हृदय चित्राधार,
मैं खड़ा इस पार
प्रिय मेरा खड़ा उस पार !

अवसाय

पार इस तट के उमड़ता
स्वर्ण - पारावार !

यह दिवस का भार!—

सान्ध्य - ज्वालाएँ जलातीं

कुसुम-उर का प्यार !

भर गगन में करुण स्पन्दन

प्रलयमय दिवसान्त - वेदन

फैलती आक्रान्त-तिमिरांचल पसार-पसार।

शून्य से हिल-मिल अकेली

बन रहीं श्वासें पहेली

उठ रहा जीवन-मरण-नद में प्रवर्तित ज्वार !

चिर-विकल यह खोज का खग
चाहता उस देश का मग
पार इस तट के उमड़ता स्वर्ण-पारावार !

चपल प्रतिपल काल के घन
चपल सुख-दुख—चपल जीवन
लिख रहा कवि अश्रु-कविता—मृत्यु-उपसंहार !

यह दिवस का भार !!

देव-दीप

प्रिय-पथ के एकाकीपन को
मैंने चिर से पाला !

अलि ! फिर आज क्षितिज पर उतरी
यह वसन्त की ज्वाला !

(मेरे अश्रु-कणों की सजनी)
जाग उठी सपनों की रजनी
आलि ! किसी ने आज भर दिया
फिर प्राणों का प्याला !

जीवन के सूने खँड़हर में
गा-गाकर आँसू के स्वर में
आँखों ने मुरझा जाने को
फिर गूँथी वनमाला !

मधु, माध्वीक और मधुवेला
पाकर जग भूला अलबेला
प्रिय-पथ के एकाकीपन को
मैंने चिर से पाला !

———

स्वगत

हे मधुर ! गीत के प्राण !

तुम कौन मृदुल-कम्पन-हिलोर में सुख असीम अनजान
लिये—
घूमा करते मादक-वसन्त-रजनी में कुसुम-पराग
पिये ?
छाया-पलकों में राशि-राशि भर स्निग्ध-पुलक
इठलाते हो,
तृण से चल चूम लताओं को वन-प्राणों में
छिप जाते हो ।
हे मधुर ! गीत के प्राण ! सजल-नीरवता के
शृंगार अहो !
मेरे जीवन के स्वप्न! कहाँ [illegible]ुनते हो लेकर
प्यार कहो ?

———

नवदीप्ति
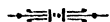
मिल गया अमरत्व युग को
आज मेरे एक क्षण से !

कामनाएँ बन गईं मधुमास प्रिय के आगमन से !
छिप गये तारे दृगों में
उतरकर नीरव-गगन से !
आँसुओं के दीप की यह
काँपती-सी रश्मि प्यारी—

कर रही है सिन्धु-लहरों
पर अनोखी चित्रकारी ।
माँगता वरदान सुख का स्वर्ग मेरे मुग्ध-मन से ।
चाँदनी की श्वास पीकर
खिल उठी कलिका हृदय की,
जगमगाई स्मृति सजीली
कनक-ज्वाला में प्रणय की ।

मिल गया अमरत्व-युग को
आज मेरे एक क्षण से !
कामनाएँ बन गईं मधुमास प्रिय के आगमन से !

प्रणय-प्रकर्ष
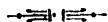
क्यों क्षितिज को चूम चुपके
बन गई सुध दीपवाली ?

क्यों बना अलि ! मैं पुजारी ?

पी सुनहली स्वप्न - मदिरा
क्यों हृदय ने पीर पाली ?
क्यों क्षितिज को चूम चुपके
बन गई सुध दीपवाली ?

सजनि ! बोलो, बन गया
मेरा मधुर-कवि क्यों भिखारी ?
क्यों बना अलि ! मैं पुजारी ?

साधना ने क्यों अकम्पित
आँसुओं की रात पाई ?
कौन-सी यह आग उर के
बीच बसने आज आई ?

शून्य की क्यों रागिनी
लगती हृदय को आज प्यारी ?

सजनि! जीवन खोज-खग बन
डोलता युग से विजन में !
नित प्रतिध्वनि कुहुक-सी
देती उठा सुनसान मन में !!

माँगता अब मरण, पीड़ाएँ—
व्यथाएँ भेंट सारी !

अनुभूति

क्या न मधुऋतु बन गया मैं
स्पर्श-अनुभव कर तुम्हारा ?

आज परिचय की निशा में
कर अपरिचित-सा इशारा—
क्या न प्रिय ! तुमने पुकारा ?

शैल-शिखरों पर थकी-सी
चाँदनी चुप सो रही थी ;
साधना मेरी सुहागिन
अश्रु-हार पिरो रही थी ।

जल उठा स्मृति-दीप
क्या तुमने न चुपके-से निहारा ?

नील की निस्तब्ध-छाया
स्मर-विकल उन्मादिनी-सी—
चुन रही थी वेदना के
फूल नव अनुरागिनी-सी ।

क्या न मधुऋतु बन गया मैं
स्पर्श-अनुभव कर तुम्हारा ?

तिमिर का अंचल हिला
निश्वास के कण मुस्कुराये ;
चपल मेरे अश्रु-कण
दृग में तुम्हारे उमड़ आये !

क्या न तब तुमने बजाया
यह हृदय का एकतारा ?

स्वप्न-शतदल की तरंगित
सुरभि-मदिरा पी अकेली—
इन्द्रधनुषी - कल्पना - सी
बन गई रजनी पहेली।

अधर पर धर अधर तुमने
क्या न अवगुण्ठन उघारा ?

प्रतीक

छीनते नक्षत्र पृथिवी के सुखों का हार !

दूर, स्मृतियों के सुनहले क्षितिज के उस पार—

शून्य करता गीत बनकर
शून्य का आह्वान ;
अतल के उर में उमड़ता
अतल का तूफ़ान ।

आज रे, कण-कण प्रवाही शापिता लाचार !—
दूर स्मृतियों के सुनहले क्षितिज के उस पार ।

चूम अंचल चाँदनी का
गिरि - शिखर अनजान—
माँगता नीरव स्वरों में
प्रलय - ज्वाला - दान ।

छीनते नक्षत्र पृथिवी के सुखों का हार !
दूर स्मृतियों के सुनहले क्षितिज के उस पार ।

विश्व में बिखरा चिरन्तन
मरण का हिम - हास,
एक कण बस चाहती
मेरी प्रबलतम प्यास !
आह, ये किरणें व्यथा की कनक - कारागार !

उधर विस्मृति दीप लेकर
है खड़ी चुपचाप,
बन रहा मैं आज अपने
ही लिए अभिशाप !
डोलता लेकर अनिल मेरी अनन्त - पुकार !
दूर स्मृतियों के सुनहले क्षितिज के उस पार !

अधीर

मैं महानाश के अधरों पर
अपना लघु परिचय रहा आँक !

तुम उतरो बन घन अंधकार
मैं छाया छूने को अधीर !

तारा-दीपों की ज्योति-राशि
आँसू की लहरों पर उतार,
सजला-तरु-पल्लव-डालों पर
चुपचाप सुलाकर किरण-भार—

कह दूँगा आहों के स्वर में
मैं पाल रहा हूँ कौन पीर ?
तुम उतरो बन घन अंधकार
मैं छाया छूने को अधीर !

पतझार चिता-सा जला रहा
मेरे उच्छ्वासों में उदास !
उड़ते ज्वाला के कण अनन्त
मेरे जीवन के आसपास।

पलकों के पथ से एक बार
एकाकी आकुल हृदय-तीर—
तुम उतरो बन घन अंधकार
मैं छाया छूने को अधीर !

मेरे सुख का भस्मावशेष
युग की आँखों से रहा झाँक !
मैं महानाश के अधरों पर
अपना लघु परिचय रहा आँक !

मेरे प्राणों का भग्न प्यार
बिखरा जाता निर्मम समीर !
तुम उतरो बन घन अंधकार
मैं छाया छूने को अधीर !

निशान्त
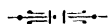
भर देता अनजान-अनिल आ
निश्वासों से मेरा अंचल !

सिहर-सिहर उठता मेरा मन
प्रिय ! यह कैसा एकाकीपन ?

उड़ते पंख पसार क्षितिज में
मेरे सपनों के खग चंचल,
भर देता अनजान - अनिल आ
निश्वासों से मेरा अंचल।

स्पंदन में गीतों की गुंजन !
प्रिय ! यह कैसा एकाकीपन ?

भय चिन्ताओं का मधु पीकर
आँसू-लहरों में इठलाता—
जब नभ के प्राणों का परिचय
मेरी स्मृति-लय में सो जाता।

भार लिये रहता नित उन्मन
प्रिय ! यह कैसा एकाकीपन ?

दीपक-सी जल-जलकर प्रतिपल
खोज रही तारों की चितवन,
मेरी पीड़ा की छाया में
किसका सम्मोहन—अपनापन ?

बन जाता किरणों का कंपन
प्रिय ! यह कैसा एकाकीपन ?

मेरे स्वप्निल आलिंगन में
सौरभ-सा संसार किसी का—
छिपकर सोया, उच्छ्वासों में
मदिरा-कण-सा प्यार किसी का—

यह मेरा उर जिसकी धड़कन।
प्रिय ! यह कैसा एकाकीपन ?

आज तृषित-अधरों पर मेरे
लहराते हैं बालू के कण।
उतरे मेरी कविताओं में—
डाल प्रदव-छाया-अवगुंठन—

मेरे सुख-दुख के नीरव-घन
प्रिय ! यह कैसा एकाकीपन ?

चिर-परिचित
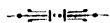
प्रिय ! क्या देखा तुमने न मुझे

अपने सपनों के आस-पास ?

प्रिय ! दिवस-विगम में क्या न तुम्हें
मिल पाया मेरा सजल-हास ?

वेतस-वन से चुन-चुन समौन
सूखे - प्रसून कलियाँ अनेक
उन्मन-सा पतझर का समीर
वेला-अंचल में उन्हें फेंक—

अविरल आँसू के कण बिखेर
क्या कह न गया मेरा निवास ?
प्रिय ! दिवस-विगम में क्या न तुम्हें
मिल पाया मेरा सजल-हास ?

किरणें जब नभ-पथ से अजान
प्रिय ! पहुँच गईं सीमान्त-पार
तब वह लघु-हीरक-घन उदास
धर किसी ठौर वेदना-भार—

क्या दे न गया चुपचाप आज
मिटती-सी मेरी स्मृति सुवास ?
प्रिय ! दिवस-विगम में क्या न तुम्हें
मिल पाया मेरा सजल-हास ?

नक्षत्रों-सा झिलमिल-झिलमिल
ओसों-सा लघु-लघु अश्रु-कांत
ज्वाला-कण-सा जगमग - जगमग
वन-सौरभ-सा प्रेमोद्भ्रांत —

प्रिय ! क्या तुमने देखा न मुझे
अपने सपनों के आस-पास ?
प्रिय ! दिवस-विगम में क्या न तुम्हें
मिल पाया मेरा सजल-हास ?

———

खोज

आज मेरे अधर पर अमरण अपरिचित हास !

मौन, मृदु, उस ओर—
अब चली मेरी तरी आया समीर-झकोर !

सिन्धु मेरा रुदन बन उठता कराह-कराह,
दूर सीमाएँ सुलगतीं चूम मेरी चाह।
तड़ित का संकेत पा डोली प्रलय की डोर !
विश्व के वरदान झरते अग्नि के बन फूल,
दे रहा जीवन बिदा ले मरण-पथ की धूल।
मिट रही है स्वप्न-सी वह स्वर्ण-गीत-हिलोर !
वेदना, बन्धन,—चिता की राख के इतिहास !
आज मेरे अधर पर अमरण अपरिचित हास !
खोजना तुम रात में, मैं आ मिलूँगा भोर !

मौन, मृदु, उस ओर—
अब चली मेरी तरी आया समीर-झकोर !

—————

अशेष-दान

शेष-जीवन मैं मिटा बनता अचिह्न अशेष !

माँगता प्रिय आज मुझसे
स्मृति-कणों का दान !
पूछता मैं—'क्या न तब
होगा हृदय वीरान ?'

माँगता प्रिय आज मुझसे
वेदना का दान !
पूछता मैं—'रिक्त होंगे
क्या न मेरे प्राण ?'

माँगता प्रिय आज मेरे
आँसुओं का हार !
पूछता मैं—'क्या न होंगे
स्वप्न छिन्नाधार ?'

माँगता अभिशाप मेरे
आज प्रिय अनजान।
पूछता मैं—'क्या न तुमने
ही दिया यह दान ?'

माँगता फिर चिह्न कोई
प्रिय विकल सविशेष
शेष - जीवन मैं मिटा
बनता अचिह्न अशेष।

सिन्धु-पुष्प

मैं प्रतीक्षा में पड़ा हूँ
द्वार खोल उदास।

तीर का बन्दी बना मैं शब्द-हीन अजान !—
सुन रहा हूँ सिंधु का आह्वान !!

क्षितिज-चुम्बन के लिए—कर छिन्न फेनिल-जाल
(देखता हूँ) उठ रहीं लहरें महा उत्ताल
चुप खड़ा नीहार की छाया लपेट दिगंत।
मिल रहे हैं स्वप्न-से दो चिर-अधीर अनन्त।

बाँध अंचल में उमंगों का प्रबल-तूफ़ान—
सुन रहा हूँ सिंधु का आह्वान।
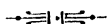
विकल प्राणों में निरंतर जागती यह साध—
'मैं पहुँच निस्सीम में बनता अनन्त अगाध !'
पी रहा है इन्द्रधनु जल-बिन्दुओं का हास ;
मैं प्रतीक्षा में पड़ा हूँ द्वार खोल उदास ।

फेंक देता कसक मेरी शून्य निठुर महान !
सुन रहा हूँ सिंधु का आह्वान !

———

प्रेमी और दीपक
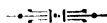
मैं सो जाता तब तू मेरे—
सूनेपन का मन बहलाता ।

मैं भी जलता, तू भी जलता
हम दोनों जलनेवाले हैं;
दोनों के जीवन दाह-भरे
दोनों के उर में छाले हैं।

तू चिह्न छोड़ जाता तम में
मैं आँसू की लघु-लहरों में;
दुनिया कह उठती—'आह, चिह्न ये
कभी न मिटनेवाले हैं।'

तू बुझ जाता तब मैं तेरी
कविताओं को चुपके गाता;
मैं सो जाता तब तू मेरे
सूनेपन का मन बहलाता।

मेरी ज्वाला से सखे! साँझ को
तू जगमग करने लगता
तेरी ज्वाला से मेरे जीवन का
अतीत-सुख जी जाता!

तेरे जलने की करुण-कथा
लिपटी है सूने-तारों में;
मेरे जलने की करुण-कथा
लिपटी विदग्ध - मनुहारों में।

तू सुखी बन्धु! अपनी लौ के
भस्मावशेष में युग-युग से
मैं सुखी बाँधकर आशाएँ
जीवन की सौ-सौ हारों में!

हम दोनों के उच्छ्वास नाश—
छाया में पलनेवाले हैं
मैं भी जलता, तू भी जलता
हम दोनों जलनेवाले हैं!

—

व्यवधान
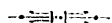
उच्छ्वासों का मधु लेने को
प्रिय ! जब तुमने हाथ बढ़ाया....

निद्रा के नीरव-उपवन में
सपनों का वसन्त जब आया
पीड़ाओं का मधु लेने को
प्रिय ! जब तुमने हाथ बढ़ाया—

तब क्यों मैंने अपने उर को
उन्मादों के बीच छिपाया ?

सुध के स्वर्णिल अन्तराल में
इन्द्रधनुष-सा कुछ लहराया
उच्छ्वासों का मधु लेने को
प्रिय ! जब तुमने हाथ बढ़ाया—

तब क्यों मैंने अपने उर को
अभिशापों के बीच छिपाया ?

जीवन के तमसावृत नभ में
चमकी जब अतीत की छाया
अश्रु-कणों का मधु लेने को
प्रिय ! जब तुमने हाथ बढ़ाया—

तब क्यों मैंने अपने उर को
ज्वालाओं के बीच छिपाया ?

अविरल
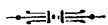
मौन का आँसू—न जाने किधर से किसने पुकारा ?

मौन जीवन का निरंतर झर रहा बन करुण निर्झर !

चित्र के आँसू बने नक्षत्र चिर से टिमटिमाते,
चित्र के आँसू बने वनफूल पथ में बिखर जाते।

गीत के आँसू पवन में उमड़कर सरिता मिलाती,
गीत के आँसू—पिकी एकान्त में उस ओर गाती।

मौन का आँसू—सुकवि की उमड़ आई हृदय-धारा,
मौन का आँसू—न जाने किधर से किसने पुकारा ?

मरण का वह मौन छिपता-झाँकता अनिमेष अक्षर,
मौन जीवन का निरंतर झर रहा बन करुण निर्झर !

लहर

चुप खड़ी तट पर अकेली

नाव मेरी रह गई !

वह गई रे, वह गई !—

गा उठी कोयल हुआ गुंजित तमावृत कूल-कानन,
टूटकर तारा गिरा, कवि का उमड़ आया विकल मन !
बन्द वीणा हो गई—बेसुध शिथिल-से तार सारे,
छा गये उडु बन क्षितिज में बिखर स्वर के करुण स्पन्दन !
एक पल ठहरी न, चुपके से उधर वह बह गई !
वह गई रे, वह गई !

स्वप्न-सी आई किधर से, कौन-सा सन्देश लेकर ?
कौन जाने, मौन में किस कल्पना का देश लेकर ?
आँकती अब लेखनी तृण-पत्र पर कोई कहानी,
इस अँधेरी रात में कम्पित प्रणय अनिमेष लेकर !
बोल नभ के शून्य ! क्या वह बात कोई कह गई ?
वह गई रे, वह गई !

झाँकता अभिशाप आ अनजान-सा मेरे हृदय में,
हृदय में ही प्रलय बसता या हृदय बसता प्रलय में ?
है छिपाये प्रकृति अपनी वेदना ज्वालामुखी में,
मैं छिपाता प्यार अपना इस सुलगते अश्रु-चय में।
चुप खड़ी तट पर अकेली नाव मेरी रह गई
बह गई रे, बह गई !

पट-परिवर्त्तन

श्वास स्पन्दन विरह-मुखरित,
मुख विरह-जलजात

रँग दिये तरु-पात
किरण से प्रिय के स्मरण ने
रँग दिये तरु-पात।

ले सुरभि-मद-भार रह-रह
मन्द-मन्द बयार बह-बह
द्वार पर आ कह गई कुछ
मधुर स्वर अज्ञात।

स्वप्न में डूबी नवेली
रात-भर जागी अकेली
अलस चितवन शिथिल तन
उठ सिहर सकुची प्रात।

विधुर प्रियमय प्राण उन्मन
पालते प्रिय-मिलन-वेदन
श्वास स्पन्दन विरह-मुखरित
मुख विरह-जलजात !

रँग दिये तरु-पात !

———

विलय

मेरे आँसू में प्रिय के
सपनों का दीपक जलता !

मेरे अतीत के तम में
प्रिय का भविष्य इठलाता,
जल जिसके अंगारों में
मेरा जीवन मुस्काता !

प्राणों की नीरवता में
प्रिय की श्वासें मँडरातीं,
मेरी पीड़ाएँ जिनमें
मदिरा-सी घुल-मिल जातीं !

मेरे आँसू में प्रिय के
सपनों का दीपक जलता—
अलि ! जिसे छिपाये रहती
मेरी अनजान-विकलता !

मेरे उर के स्पन्दन में
प्रिय का भविष्य कुछ गाता,
जिसकी लय में यह मेरा
अपनापन मिटता जाता।

अभिषेक

लघु आशा-स्वप्नों का उदास
मैं हूँ मधु-चुम्बित शेष-हास

सिकता के स्वर से उठा जाग
सन्ध्या की कम्पित किरणों-सा
जीवन का भूला हुआ राग।

नभ का लहराता नील चीर
छूकर नीरधि का तृषित तीर
चंचल-लहरों से फूट पड़ा
सुध की नीरवता का पराग।

श्वासों में बाँधे प्रलय-भार
इस तिमिरावृत पथ पर अपार
प्राणों ने सुलगाई अजान
यह अमरण ज्वालामयी आग।
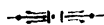
लघु आशा-स्वप्नों का उदास
मैं हूँ मधु-चुम्बित शेष-हास
प्रिय ने छिपकर रँग दिया आज
मेरी पीड़ाओं का सुहाग।

मौन

अश्रु में फिर मिल गया मैं

विरह-कुसुम-सुवास बनकर !

सो गया उन्मत्त जब वह
मैं खिला तब हास बनकर !

वीचियों-से चिर प्रकम्पित
रुदन उसके, गान उसके,
सजग-आभा से प्रतीक्षा की
सजल सन्धान उसके—
उमड़ द्रुत मेरे हृदय में
छा गये उच्छ्वास बनकर !

स्वप्न उसके ले सलोने
क्षितिज को मैंने सजाया,
स्मृति-करों से सुकवि के
उर-यंत्र को मैंने बजाया।
अश्रु में फिर मिल गया मैं
विरह-कुसुम-सुवास बनकर !

वह प्रलय का रूप, मैं
उस रूप का उन्मत्त-प्याला,
वह बटोही श्रान्त, मैं
उसके हृदय की अमिट ज्वाला।
मैं बिछा पथ पर अपरिचित
चाँदनी की श्वास बनकर !

साधना का दीप झिलमिल
शून्य का इतिहास उन्मन,
कामनाओं को लपेटे
वेदना का चिर-तृषित घन—

मैं मचलता हूँ तुहिन में
मरण का उल्लास बनकर !
सो गया उन्मत्त जब वह
मैं खिला तब हास बनकर !

यात्री

मैं सोच रहा नीरव मन में
उस दिन का कुतुक-भरा परिचय,
यह मुझे चाँदनी हेर रही
अपना अनभ्र शृंगार लिये।

आकाश उमड़ता जब नीरव
सन्ध्या का चुम्बन-भार लिये
तब क्यों हो जाता मैं उदास
अपना चिर-संचित प्यार लिये ?

दीपक की स्वर्ण-शिखा हिल-डुल
जब कहती अपनी करुण-कथा
तब क्यों जल उठता मैं अजान
अपना सूना संसार लिये ?

नभ से अतीत की ओर मूक
तारों का जब इंगित होता
तब क्यों हो उठता मैं अधीर
कम्पनमय एक पुकार लिये ?

जब सपनों को रँगता निशीथ
अम्बर में, बेला-अंचल में
तब प्राण ! सिहर उठता मैं क्यों
आँसू-सुमनों का हार लिये ?

चंचल-समीर चुपके आता
कर कोई सुख-सन्देश वहन
मैं गीत खोजने लगता क्यों
स्मृतियों के टूटे तार लिये ?

मैं सोच रहा नीरव मन में
उस दिन का कुतुक-भरा परिचय,
यह मुझे चाँदनी हेर रही
अपना अनभ्र शृंगार लिये ।

रो-रोकर लिखती नग्न निशा
धूमिल कहानियाँ ओसों की
क्यों वन-छाया चुप आज प्रलय—
अन्तरतम में साकार लिये ?

सित-शिला-तल्प पर वियोगिनी
कल्पना सो रही मदिरा-सी,
उर में अतृप्त-आशाओं का
शत-शत भीषण अंगार लिये।

हिल रही डोर यह जीवन की
निर्मम परिवर्तन-लहरों में,
डगमग-डगमग जलयान चला
जा रही मृत्यु उस पार लिये !

———

मनुहार

श्वास में भर अग्नि के कण
करुण मैं जलता प्रतिक्षण

दीपवाले—

गीत रचता रात-भर अलि !
मैं तिमिर में दीप बाले !

नग्न-निर्झर-कूल पर नित
सान्ध्य-घन-सा जा प्रकम्पित
मैं सिसक धोता हृदय के
घाव अगणित टीसवाले !

श्वास में भर अग्नि के कण
करुण मैं जलता प्रतिक्षण
प्रलय की स्वप्निल-सुरा से
भर छलकते पलक-प्याले ।

उर-गगन में उमड़ धूमिल
बिखर जाता प्यार ऊर्मिल
आलि ! जीवन में अभावों की
चिरन्तन पीर पाले ।

रूप-रँग प्रिय का चिरन्तन
हृदय बनता नित्य नूतन
मौन रहता मैं रहस्यों के
क्षितिज पर दृष्टि डाले !

दीपबाले !—

———

विद्रोह

लिपट व्यथाओं में न करूँ मैं
पलछिन को अनिमेष !—
यह कैसा सन्देश !

आज न सूखी कलियों में
खोलूँ प्राणों का देश—
यह कैसा सन्देश ?

मोती-से आँसू-कण अपने
मनुहारों में मैं न छिपाऊँ,
आज न ज्वालाओं के उर में
मैं अपना संसार बसाऊँ।
सजग-साधना से न करूँ मैं
प्रिय-पथ का उन्मेष !
यह कैसा सन्देश !

अम्बर के सुरभित स्पन्दन में
मैं न सजल निश्वास मिलाऊँ,
पतझर में प्रिय के मधुवन का
आज न मधुरालोक खिलाऊँ।
करूँ न पीड़ा के पराग से
रंजित रज का वेश।
यह कैसा सन्देश !

आज प्रलय के अन्धकार में
मैं अपना चिर-दीप न बालूँ,
शेष-रश्मियों में जीवन की
अपना पागल प्यार न पालूँ।
लिपट व्यथाओं में न करूँ मैं
पलछिन को अनिमेष !
यह कैसा सन्देश ?

सङ्केत

निर्झर की लहरों से मैंने

अतुल-सिंधु की ओर निहारा !

यह पाया संकेत तुम्हारा !—

कहीं राह में ओस-कणों-सा
प्रिय ! चुपचाप ढुलक जाने को
कहीं विलय हो निभृत निलय में
कनकस्वप्न-सा मुस्काने को—

गूँथ दिया सन्ध्या-अलकों में
मैंने अपना आँसू-तारा !

मधु कुहरित मदिरा-रस पीकर
स्मृति की मादक-अमराई में
निश्वासों की तूली लेकर
अपनी ही लघु परछाहीं में—

रज की रस-भीनी पलकों पर
मैंने सूना चित्र उतारा !

तम के नीलम-अन्तराल में
वन सौरभ के स्वर-सा बजकर
पलछिन की तन्द्रिल-छाया में
आज नाश की स्मित-सा सजकर—

निर्झर की लहरों से मैंने
अतुल सिंधु की ओर निहारा।

———

तन्मय

मेरी सीमाएँ पहुँचातीं
प्रिय के पास मुझे अनजाने

अपने ही निस्सीम क्षितिज में
सीमाओं के ये उन्मद घन—
अग्नि-कणों-सा जल-जल उठते
गहन रहस्यों का अवगुंठन !

मेरे तन्मय प्राण स्वप्न-सा
घुलमिल तम के आलिंगन में
खिल-खिल उठते स्वर्ण-कुसुम बन
ज्योति-रश्मियों के आँगन में।
बँध जाता आँसू तारों में
आ-आ कर कोई छायातन !

क्षणपल के चिर-आमीलन में
अलख रहा जो रूप अनंजन—
जिसे न आँक सका अपने में
मेरी पलकों का आसंजन,
वही दूर के मधुर-गीत-सा
भरता है प्राणों में गुंजन !

मूक अभावों के अंचल से
उतर-उतर फेनिल-लहरों पर—
प्रिय के भावों के वसन्त-कण
लहराते मेरे अधरों पर !
कोमल क्षितिज वलय बन जाता
मेरी निश्वासों का कम्पन !

मेरी सीमाएँ पहुँचातीं
प्रिय के पास मुझे अनजाने ;
मेरे इस निस्सीम-रूप को
मतवाला यह विश्व न जाने ।
प्रिय की साँसों का स्पन्दन ले
मुस्काते जीवन के बन्धन !

अपने ही निस्सीम क्षितिज में
सीमाओं के ये उन्मद घन—
अग्नि-कणों-सा जल-जल उठते
पहन रहस्यों का अवगुंठन !

———

आत्म-निवेदन

प्राण! तुम्हारे उर में चिर से
यह मेरा आना-जाना!

स्वर हूँ, तुमने पहचाना !

झीनी सन्ध्या की छाया में
कनक कल्पना वातायन से,
शून्य व्यथाओं के मधुवन में
झाँक लताओं की चितवन से—

कण-कण में सावन के घन-सा
देखा मेरा लहराना !
स्वर हूँ, तुमने पहचाना !

अलस नील के आँगन से चल
उतरे हिममय गिरि-शिखरों पर
फिर बन मनुहारों के आँसू
बिखर गये जब चल-लहरों पर—
तब निज नूपुर-रव में तुमको
मधुर लगा मेरा गाना !
स्वर हूँ, तुमने पहचाना !

सपनों के आने की आहट—
तुमने आँसू-दीप जलाये
सुध के मृदु स्पन्दन से हिलकर
निश्वासों के तार मिलाये !

प्राण ! तुम्हारे उर में चिर से
यह मेरा आना-जाना !
स्वर हूँ, तुमने पहचाना !

अव्यक्त-राग

बिखर बिछ जाते पथिक-सा
राह में अरमान मेरे

कौन-सी अज्ञात आभा
आज लेकर प्राण मेरे !
रँग दिये ये गान मेरे ?

गन्ध - मन्द - सजल - पवन के
साथ प्रात विषाद पीकर
इन्द्रधनुषी - तुहिन - छाया-
गोद में पलमात्र जीकर—
बिखर बिछु जाते पथिक-सा
राह में अरमान मेरे !

चल दुरन्त-असीम से, स्वर—
एक परिचय-शून्य आता,
स्वप्न में बहते हुए मेरे
अलस - उर को जगाता ;

सिंधु बन जाते उमड़ कर
अश्रु तब अनजान मेरे !

शून्य - संध्या - वेदना
अनिमेष कम्पित-सा हृदय ले
किरण - भस्माधार में चिर-
दग्ध वाष्पाकुल प्रणय ले—
चूम लेती स्मृति - सरीखी
मधुरतम वरदान मेरे !

मरण के काले-तिमिर-सा
शाप का निर्वात बादल
चाँदनी की शिथिल-पलकों से
ढुलक कर एक ही पल
श्वास-दीपक में पिघल
सुनता विकल आह्वान मेरे !

प्रिय ! कहाँ से मोतियों-सा
मधुर-आकर्षण बिछाते ?
प्यार कर मेरे हृदय को
प्यार क्यों अपना छिपाते ?

कौन-सी अज्ञात-आभा
आज लेकर प्राण मेरे !
रँग दिये ये गान मेरे ?